धर्म, पर्यावरण और गाँधी

रवि यादव*

सारांश

लोगो की माँगों की पूर्ति के लिए तेजी से बढ़ती उत्पादन इकाईयों ने मानव और पर्यावरण के समक्ष चुनौतियाँ पैदा की हैं, साथ ही लोगों की उपभोग करने की क्षमताओं में भी विस्तार किया है। लोगों में विलासिता और अत्यधिक उपभोग की प्रवृति को जन्म दिया है। उपभोग की इस बढ़ती क्षमता ने संसाधनों की समान उपलब्धता के समक्ष संकट पैदा कर दिया है। ऐसे में भारत जैसे देश जिसकी वैचारिक निर्मिति महात्मा गाँधी के विचारों और दर्शन से हुई है, जिसके तहत सीमित और अत्यन्त जरूरी उपभोग पर ही बल दिया गया है, धूमिल होती जा रही है। वैश्विक स्तर पर तमाम संस्थायें सतत विकास की मुहिम को लेकर सक्रिय हैं। सतत विकास की अवधारणा पर चलकर ही हम आने वाली पीढ़ी को ध्यान में रखते हुये संसाधनों के सीमित उपभोग की ओर अग्रसर हो पायेंगे।

तेजी से बढ़ते वैश्विक ताप, हिमखण्डों का पिघलना, नदियों में पानी की कमी, सूखाग्रस्त भूमि के आकार में वृद्धि, बढ़ता मरूस्थलीकरण कहीं न कहीं सभ्यता के विनाश की ओर संकेत करता है। इसे सही समय पर समझ कर व्यक्तिगत रूप से सुधारात्मक प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। ऐसे में गाँधी का कथन कि, ''प्रकृति हमारी जरूरतों को पूरा करने के लिए है, लालचों को नही'' अत्यन्त सार्थक सिद्ध होता है। हमें भविष्य को ध्यान में रखते हुये विकास करना है तो गाँधी के विचारों और जीवन दर्शन को अपनाना होगा। अन्यथा इस सुन्दर प्राकृतिक वातावरण को आने वाली पीढ़ी के लिए हम कचरे का ढेर बनाकर छोड़ जायेंगे।

मुख्य शब्द– प्रकृति, पर्यावरण, धर्म, राजनीति, विकास, आर्थिक संवृद्धि, प्रदूषण ।

प्रस्तावना

लगभग सभी धर्मों में सभ्यता के विनाश का अपना एक मिथक है कि एक दिन आएगा, जब सब कुछ नष्ट हो जाएगा। पता नहीं यह बात कितनी सच है लेकिन पर्यावरण का आज के दौर में जो हाल है अगर ऐसा ही चलता रहा, तो आने वाली पीढ़ियों के लिये हम पृथ्वी को दूषित गैसों का गुबार या कचड़े का ढेर बनाकर छोड़कर जायेंगे। जोकि अंततः सभ्यता के विनाश के लिये जिम्मेदार होगा।

महात्मा गाँधी ने कहा है, "प्रकृति हमारी जरूरतों को पूरा करने के लिये है लालचों को नहीं।" गाँवों में आज भी यह परंपरा बची हुयी है कि सूरज ढलने के बाद पेड़ों के पत्तों को तोड़ा नहीं जाता है क्योंकि ऐसा माना जाता है कि सूर्यास्त के बाद पेड़ पौधे भी शयन की मुद्रा में होते हैं। प्रायः पूजा–पाठ, शुभ अवसरों पर वृक्षों, उनके उत्पादों का उपयोग किया जाता हैं। सुदूर क्षेत्र में रहने वाला आदिवासी समाज आज भी पेड़ पौधों के काफी करीब है। मसलन पेड़ पौधे उनके जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। वे उसे संरक्षित करने का प्रयास भी करते हैं। वहीं दूसरी ओर आज एक ऐसा समाज भी पनप रहा है जो दूर शहरों में निवास कर रहा है। जिसके लिये पेड़ पौधे मात्र ऑक्सीजन देने वाले और कार्बन डाई ऑक्साइड ग्रहण करने वाले साधन तक सीमित हो गये हैं। मानव सभ्यता के लिए यह अत्यन्त भयावह स्थिति है कि पेड़ पौधों के कटने, जंगलों में आग लगने से एक आवादी विशेष को कोई फर्क नहीं पड़ता है। उसकी कोई संवेदना तबाह होते पारिस्थितिकी तंत्र के साथ नहीं जबकि वह स्वयं भी इस पारिस्थितिकी तंत्र का अंग हैं और इस तंत्र में किसी एक की कमी समूची पारस्थितिकी तंत्र को प्रभावित करती हैं।

प्राचीन परंपराओं और धार्मिक रीति रिवाजों में पर्यावरण के प्रति संवेदना की बात की जाये तो भारतीय संस्कृति

* शोधार्थी, हिन्दी विभाग, डी0 एस0 बी0 परिसर, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

पर्यावरण के प्रति काफी संवेदनशील रही है। वैदिक काल से ही हमारे धार्मिक ग्रंथों में तुलसी, पीपल, बरगद, केला आदि वृक्षों को देवी–देवता की तरह पूजा जाता रहा है और उसके संरक्षण की बात की गयी है। लेकिन सभ्यता के विकास के क्रम में विज्ञान और तकनीकी ने इस परंपरा को तोड़ने का प्रयास किया है। जिससे पर्यावरण के समक्ष संकट उत्पन्न हुआ है। इस संकट से बचने के लिए राष्ट्रीय स्तर से लेकर अंतराट्रीय स्तर तक पर्यावरण संरक्षण के प्रयास जारी हैं। संयुक्त राष्ट्र के द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से इस विषय पर चर्चा जारी है और इस सम्बन्ध में किये गये नये प्रयासों को कहीं–कहीं सफलता भी मिली है। लेकिन आर्थिक वृद्धि की दौड़ में दौड़ रहे राष्ट्र गाँधी के उक्त कथन पर बिल्कुल भी विचार नहीं कर रहे हैं, कि ''प्रकृति हमारी जरूरतों को पूरा करने के लिए है लालच को नही''। भारत के संदर्भ में बात करें तो पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए अलग से मंत्रालयों एवं विभागों का गठन किया गया है जिसमें वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, नमामि गंगे परियोजना, जल संसाधन, नदी विकास और गंगा कायाकल्प मंत्रालय का गठन पर्यावरण के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता को दर्शाता है। इसके बावजूद पर्यावरण को सुधारने की दशा में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई है, हर वर्ष राजधानी दिल्ली में प्रदूषण स्तर खतरे के निशान से ऊपर चला जाता है, 'हर वर्ष लगभग 12 प्रतिशत से अधिक मौतें पर्यावरण प्रदूषण से हो रही हैं।^ (W.E.F.;2018) ऐसे में सरकार के कदम प्रभावी साबित नहीं हो रहे हैं।

विकास के इस क्रम में क्या हमने सच में वास्तविक विकास किया है? क्या हम सही दिशा में अग्रसर हैं? क्या विकास के पैमाने प्राकृतिक जंगलों को उजाड़ कर बनाये गये कंक्रीट के जंगल हैं या पर्यावरण को प्रदूषित करते कारखाने या मोटर गाड़ियाँ इसके मानक हैं? तकनीक के विकास ने भौतिक दूरियों को तो कम कर दिया लेकिन मानवता को कहीं पीछे छोड़ दिया है। क्या ड्राइंग रूम में सजे प्लास्टिक के फूल मानव जीवन में सुगंध बिखेर सकते हैं? कभी नहीं। ई.ई किमसिंग ने कहा था कि '' खिले हुये फूल और कुछ नहीं धरती की मुस्कराहट हैं।' (चातक ; 2006) लेकिन विडंबना है कि धरती की यह मुस्कराहट धीरे–धीरे फीकी पड़ने लगी है और गाँधी जी का यह कथन कि धरती हमारी जरूरतों को पूरा करने के लिये लालचों को नहीं अब अप्रासंगिक होने लगा है।

प्रकृति के बिना हमारा कोई अस्तिव नहीं है। हवा–पानी भोजन, धूप सब कुछ हम प्रकृति से ही प्राप्त करते हैं। प्राचीन काल से मानव समाज पेड़ पौधों और पर्यावरण को ईश्वर के रूप में देखते आ रहा है। लेकिन जब आराम और सुविधा की बात आती है तो हम सब भूल जाते हैं कि प्रकृति ने हमें जो दिया है उसका संरक्षण करना हमारा कर्तव्य है। हम विलासितापूर्ण जीवन जीने की चाह में उस हद तक प्रकृति का दोहन कर लेते हैं जिसका आने वाले समय में मानव अस्तित्व पर भयानक असर पर सकता है। प्रदूषण ने तमाम तरह की बीमारियों को जन्म दिया है जिसने बुजुर्गों और बच्चों को बुरी तरह से प्रभावित किया है। वायु प्रदूषण ने श्वास संबधित तमाम बीमारियों को जन्म दिया है जिसमें फेफड़ों का कैंसर, दमा जैसे गंभीर रोग शामिल हैं। पर्यावरण के प्रति जागरूकता फैलाने के लिये हर वर्ष पाँच जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाया जाता है। वर्ष दो हजार उन्नीस में इसका विषय ''वायु प्रदूषण'' रहा। लेकिन इस दिशा में जो प्रयास दिखाई देंगे उससे साबित होगा कि दिवस मनाना कितना प्रसंगिक और सफल है। हिन्दू धर्म में वायु को देवता माना गया है। लेकिन ये प्रदूषित हवा जब कैन्सर का कारण बनेगी तो कब तक हम इसे देवता मान पायेंगे।

''भारत में आज भी 60 प्रतिशत जमीन सिंचाई के लिये मानसून पर निर्भर है। संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के मुताबिक पर्यावरण पर किसी भी प्रकार के संकट का सर्वाधिक असर ग्रामीण आबादी पर पड़ेगा। ''(राजगोपालन;2017) ताजी हवा, साफ पानी, पहाड़, हरियाली, नदियाँ प्राकृतिक तौर पर हमारे बीच मौजूद हैं। जिन्हें रूपये खर्च करके हासिल नहीं किया जा सकता है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा सतत् विकास के लिये AGENDA-2030 लागू करने की दिशा में प्रयास जारी है। जिसमें चीन को मेजबान देश बनाया गया है। क्योंकि यह विश्व का सर्वाधिक कार्बन उत्सर्जनकर्ता देश है। लेकिन संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे बड़े देशों का पेरिस जलवायु सन्धि से वापस हाथ खींच लेना यह संकेत करता है कि विकास की दौड़ में भागते ये देश आज भी पर्यावरण के प्रति संवेदनशील नहीं है और न ही इन्हें विश्व के छोटे देश जोकि जलवायु परिवर्तन से होने वाले प्रभाव का सामना नहीं कर सकते हैं की कोई चिन्ता है। इस बार के विश्व पर्यावरण दिवस पर एंटोनियो गुटरेज ने कहा

कि ''हम सभी इस ग्रह पर भरोसा करते हैं। हम जो खाते हैं, जो पीते हैं और साँस लेते हैं उन सबकी गुणवत्ता प्रकृति के संरक्षण पर निर्भर है। पर्यावरण प्रदूषण से ग्लोबल वार्मिंग बढ़ रही है। यह जीवन और मौत के बीच की लड़ाई है जिससे हम सबको जीतना होगा। पिछले कुछ वर्षों में विश्व पर्यावरण दिवस पर संयुक्त राष्ट्र द्वारा तय किये गये लक्ष्यों को देखें तो पर्यावरण के समक्ष प्रमुख समस्यायें साफ नजर आती हैं।

1 सात अरब लोगों के बोझ और प्रकृति के इस्तेमाल में सावधानी बरतना – वर्ष 2015
2 वन्य जीवों की तस्करी को रोकना – वर्ष 2016
3 लोगों को पर्यावरण से जोड़ना – वर्ष 2017
4 प्लास्टिक जन्य प्रदूषकों से निपटना – वर्ष 2018
5 वायु प्रदूषण – वर्ष 2019

इन लक्ष्यों से ही अनुमान लगाया जा सकता है कि समस्या अत्यंत गंभीर है। ''प्लास्टिक का लाइफ साइकिल 1000 वर्ष का होता है। ''(गुहा;2013) अर्थात 1000 वर्ष तक वह विभिन्न रूपों में मानव और पर्यावरण पर अपना असर दिखाता रहता है। इसको ध्यान में रखते हुए दो अक्टूबर 2019 से भारत सरकार सिंगल यूज प्लास्टिक पर प्रतिबन्ध लगा रही है।

वन्य जीवों की तस्करी भी एक गम्भीर मुद्दा है। जिसमें अन्धविश्वासों ने कई स्तर पर प्रभावी भूमिका निभाई है। हाथी के दाँतों को घर में रखना शुभ माना जाता है, इससे बनी मूर्तियाँ अत्यधिक कीमती होती हैं। बाघ के दाँतों, भालू के नाखून का ताबीज गले में पहनना, औषधीय रूप से भालू के पित्त की थैली, गैंडे के सींग का प्रयोग, पूजा के लिए चीते की खाल से बने आसन पर बैठना आदि रीति रिवाज के लिए जानवरों की हत्या की जाती हैं जिससे उस क्षेत्र का पारिस्थितिकी तंत्र प्रभावित होता है। यही सब कारण अंतर्राष्ट्रीय बाजार में जानवरों के अंगों की कीमत को बढ़ाते हैं तथा उनकी हत्या को प्रोत्साहित करते हैं। यूनाइटेड नेशन्स द्वारा कनवेन्शन ऑन इण्टरनेशनल ट्रेड ऑफ इनडैनजर्ड स्पैसीज ऑफ वाइल्ड लाइफ फ्लोरा एण्ड फोना (CITES) द्वारा जानवरों के अवैध व्यापार पर प्रतिबन्ध लगाये गये हैं। लेकिन 'आज भी अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में जानवरों के अंगों के व्यापार का कारोबार लगभग तीन सौ करोड़ रूपये प्रतिवर्ष का है। (W.E.F.;2018)

स्टॉकहोम सम्मेलन में पहली बार ''एक ही पृथ्वी'' का नारा दिया गया तथा 15 सितंबर 1972 से हर साल विश्व पर्यावरण दिवस मनाने की घोषणा की गयी। पर्यावरण दिवस मनाते हुए तकरीबन 5 दशक हो चुके हैं लेकिन चिन्ताएं जैसी थी वैसी ही हैं। 'भारत में होने वाली 12 प्रतिशत मौतों की वजह वायु प्रदूषण है। इसके चलते प्रतिवर्ष देश में 1 लाख से अधिक 5 साल से छोटे बच्चों की मौत हो जाती है। (W.E.F.;2018) आंकडा यह भी दर्शाता है कि मौतों की संख्या लड़कों की तुलना में लड़कियों की अधिक है। ऐसे में पहले से ही लैंगिक असमानता से जूझ रहे भारत जैसे देश को पर्यावरण प्रदूषण ने चौतरफा प्रभावित किया है। संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट के मुताबिक 2010 से 2014 के बीच ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में 22 फीसदी वृद्धि हुई है। जिसमें सबसे ज्यादा भागीदारी ऊर्जा क्षेत्र की है। ऐसे में ऊर्जा उत्पादन इकाइयों की लगातार बढती संख्या तथा सरकारों के अत्यधिक ऊर्जा उत्पादन के महत्वाकांक्षी लक्ष्यों पर भी प्रश्न उठता है। हमें अत्यधिक उत्पादन से अधिक, अत्यधिक खपत के उपकरणों और गैर जरूरती उपयोग में ऊर्जा की बर्बादी को रोकने का प्रयास करना चाहिए। तकनीकी उन्नति के साथ कम ऊर्जा खपत के उपकरणों की बाजार में सहज उपलब्धता सुनिश्चित करनी चाहिए। न कि बड़े–बड़े बाधों तथा तापीय ऊर्जा संयत्रों को लगाकर पर्यावरण को दूषित करना चाहिए। ''आँकड़े यह बताते हैं कि गहरे ट्यूवैलों की संख्या में 80 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जिससे भौमजल का स्तर अत्यंत नीचे चला गया है तथा एक बड़ा भू–भाग सूखे की चपेट में आ गया है। सिंचाई की 94 प्रतिशत योजनाएं भूजल पर आश्रित है। (राजगोपालन;2017) अतः भू–जल पर निर्भरता कम करने की आवश्यकता है। तकनीक के माध्यम से कम सिंचाई में अधिक उत्पादन करने वाले बीजों का उपयोग करने की जरूरत है जिससे भौम जल का कम से कम दोहन हो।

बढ़ते तापमान और हिमखण्डों के तेजी से पिघलने से पीने के पानी की उपलब्धता आने वाले समय में अत्यंत कम होने जा रही है। मीठे पानी से भूमि को रीचार्ज करने तथा कृषि के लिये पानी की उपलब्धता में नदियों की महत्वपूर्ण भूमिका है। जलवायु परिवर्तन का प्रभाव नदियों पर भी देखा जा रहा है। नदियों में बढते प्रदूषण का कारण शहरों के गंदे नाले कृषि भूमि में उपयोग होने वाले उर्वरकों की मात्रा, तटों पर अतिक्रमण, धार्मिक आयोजनों में नदी के किनारे आयोजित होने वाले विभिन्न मेलों, विसर्जन की प्रथाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इस बात को कहने में किसी प्रकार का संदेह नहीं है कि धर्म ने पर्यावरण संरक्षण में जितना योगदान दिया है, उतना ही उसे दूषित भी किया है। कुंभ जैसे बड़े मेलों का आयोजन भारत में नदियों के तट पर ही होता आ रहा है। यहां पर देश के कोने–कोने से करोडों की संख्या में श्रद्धालु एकत्रित होते हैं।

उनके रूकने के लिए प्रायः नदी के तट पर ही व्यवस्था की जाती है। नियमित दिनचर्या के कार्य नदी के तट पर ही सम्पन्न होते हैं। तटों पर निर्माण कार्य किये जाते हैं, तंबू लगाये जाते हैं ये सभी क्रियायें नदी के पारितंत्र को बुरी तरह से प्रभावित करती हैं। बावजूद इसके सरकार का लक्ष्य रहता है कि पर्यावरण को कम से कम हानि हो लेकिन फिर भी पिछले कुंभ में इलाहाबाद में पाँच करोड़ लोगों का आगमन हुआ। इतनी बड़ी संख्या में लोगों के लिए व्यवस्था करने के लिए नदी के तट पर सड़कों का निर्माण हुआ, मशीनों के माध्यम से कार्बन उत्सर्जन आदि ने निश्चित रूप से वहां के परितंत्र को प्रभावित किया, नदी के आसपास तथा नदी के अंदर की हलचलों ने नदी के अन्दर के जीव जंतुओं पर अवश्य ही असर डाला होगा। इस तरह के बड़े आयोजन का नदी के किनारे होना निश्चित रूप से खतरा पैदा कर सकते हैं, केदारनाथ जैसी आपदा को भी जन्म दे सकते हैं। ये बात ठीक है कि प्राचीन काल से नदियां हमारी संस्कृति की वाहक रही हैं और आयोजन प्राचीन काल से होते आ रहे हैं लेकिन इन सबके बीच हमें बढ़ते जनसंख्या दबाब को भी ध्यान में रखना होगा। अन्थया स्थिति बदहाल हो सकती हैं।

धार्मिक आयोजन में प्रायः शुद्ध प्राकृतिक चीजों का प्रयोग किया जाता है। जैसे चंदन की लकड़ी, हाथी के दाँतों से बनी मूर्तियाँ, माला, शेर तथा चीते के दाँत को गले में पहनने जैसी प्रथाएं, पशुबलि आदि। इस सभी सामग्री को उपलब्ध कराने में पर्यावरण को बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है तथा कई जीवों को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ता है। सरकार ने इसे रोकने के लिये कानून बनाये हैं। लेकिन आस्था की आँधी में चीजें रूकने का नाम नहीं ले रहीं हैं। लोगों को इनके प्रति संवेदनशील होने की आवश्यकता है। कई रूपों में धर्म ने पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। पहाड़ी राज्यों में पवित्र उपवन जैसी अवधारणाएँ वन के पूर्ण रूप से विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। मांगलिक अवसरों पर पौधे लगाना, गाँव वालों द्वारा अपने वनों को देवी को दान कर देना तथा उसमें किसी भी प्रकार की गतिविधि को प्रतिबंधित कर देने जैसी अवधारणाएं शामिल हैं। इन सभी गतिविधियों के कारण ही पहाड़ी राज्यों का व्यक्ति तथा जनजातीय समुदाय आज भी पेड़ पौधों और पर्यावरण के प्रति जागरूक तथा संवेदनशील हैं। जैसे –जैसे लोगों में पर्यावरण के प्रति संरक्षण का भाव बढ़ रहा हैं, सरकार की भूमिका और जिम्मेदारी भी बढ़ती जाती है। भारत सरकार द्वारा इस दिशा में किये गये कार्यों पर एक रिपोर्ट में यह बताया कि 'पेड़ों के आच्छादन में 1 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जोकि 8–9 हजार एकड़ के करीब है। (Ministry of Forest and Environment;2018). 1981 की वन नीति 33 प्रतिशत वन आच्छादन की बात करती है। वर्तमान स्थिति मे 'मध्यप्रदेश, छततीसगढ़, उडीसा, झारखण्ड जैसे सघन वन वाले राज्यों में वन क्षेत्र में कमी आयी है। जिसका मुख्य कारण इन राज्यों में तेजी से फैलता सड़कों का जाल, बढ़ती जनसंख्या के लिये फर्नीचर निर्माण तथा घरेलू निर्माण में अत्यधिक लकड़ी का प्रयोग है।'(चातक;2006)

पर्यावरणविदों के अनुसार कार्बन सिंकिंग के लिये वृक्षों की विविधता तथा अलग–अलग आयुवर्ग के वृक्षों का होना आवश्यक है। इसलिये पुराने वृक्षों को काटना तथा नये को लगाना भी आवश्यक हो जाता है तथा जो पौधे लगाये जा रहे हैं वह उस जगह के लिये उपयुक्त हैं या नही, इन बिन्दुओं पर भी विचार किये जाने की आवश्यकता है।

इन सब को ध्यान में रखते हुये भारत सरकार द्वारा चलाये जाने वाली परियोजनाओं में सराहनीय कार्य हुआ है। नयी रिपोर्ट के मुताबिक बाघों की संख्या में लगभग सभी राज्यों में वृद्धि देखने को मिली है। पर्यावरण से संबंधित कानूनों को और सुदृढ़ किया जा रहा है तथा स्वच्छता अभियान जैसे कार्यक्रमों ने भी पर्यावरण को स्वस्थ रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जिसमें स्वच्छ भारत अभियान, स्मार्ट सिटी मिशन, ग्रीन बैल्ट रोड जैसी योजनायें प्रमुख हैं।

इन सब तथ्यों के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि जीवों के बिना पौधों का अस्तित्व तो हो सकता है लेकिन पौधों के बिना जीवों का नहीं। हमारी 85 प्रतिशत जैव संपदा खतरे की स्थिति में है। कौन सी चीजें हैं जिनसे ये खतरे उत्पन्न हो रहे हैं? भूमि विश्व के कुछ भाग का 29 प्रतिशत है। जिसके 30 प्रतिशत भाग पर वनस्पति है। जोकि लगभग 7.7 बिलियन आबादी का वहन करती है। अतः अत्यधिक जनसंख्या दबाव पर्यावरण संकट का प्रमुख कारण साबित हो रहा है। सुंदरवन द्वीपों में हर वर्ष कम से कम दो चक्रवाती तूफान प्रहार करते हैं। ये तूफान भले ही कम आते हों मगर इनकी तीव्रता बढ़ती ही जा रही है। इससे तटवर्ती क्षेत्रों में बाढ़ का आना, द्वीपों में भूक्षरण, जनसंख्या का विस्थापन आदि होता है। इसके पीछे भी पर्यावरणविद जलवायु परिवर्तन को प्रमुख कारण मान रहे हैं। सिंचाई के लिये कुँए खोदे जाते थे परंतु समय के साथ भूमिगत जलस्रोत कम होते गए और ध्वस्त हो गये। जिससे पानी का जमीन के अंदर जाने का प्रवाह रूका और सतह पर ही पानी बहता रहता है। तटवर्ती क्षेत्रों से वृक्षों का कटाव जिससे मिट्टी का कटाव बढ़ जाता है। मानसून के समय से बाद में आने से फसलों का चक्र प्रभावित हुआ है। वर्षा क्रम में कमी जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणाम हैं। इन सभी समस्याओं से निपटने के लिये जनसंख्या दबाव एक बड़ी समस्या है। संस्थानों पर जितना अधिक दबाव बढेगा उतनी ही अर्थव्यवस्था बढेगी और अधिक दबाव से संतुलन प्रभावित होगा। यह संतुलन सभी के लिये आवश्यक है। चाहे वह समाज हो, हमारे आस

पास का वातावरण हो, संसाधनों पर सभी की पहुँच या समान रूप से उपलब्धता, स्थानीय पर्यावरण हो या वैश्विक तापन जैसी समस्यायें इन सभी कारणों के पीछे कहीं न कहीं वजह जनसंख्या का बढ़ता दबाब भी है। सभी तक संसाधनों को पहुँचाने के लिये अत्यधिक दोहन और उत्पादन की आवश्यकता पड़ती है। जिससे पर्यावरण का चक्र प्रभावित होता है। इसी क्रम में धीरे–धीरे नयी समस्यायें पैदा होने लगती हैं। अतः देशों को जनसंख्या नियंत्रण जैसे कदमों की ओर बढ़ना चाहिए। साथ ही साथ जनता को जागरुक कर प्रभावी रूप से गाँधीवाद की ओर मुड़ने की आवश्यता है। उपयोग और विलसिता की कोई सीमा नही है। जिसके पास पर्याप्त मात्रा में धन है उसे दूसरे के हिस्से के संसाधनों का उपयोग करने का कोई अधिकार नहीं है। विश्व में व्याप्त गरीब और अमीर के बीच की खाई अगर इसी तरह बनी रही और सरकारों ने इसकी दिशा में कदम नहीं उठाये तो इसके भयावह परिणाम देखने को मिलेंगे। जलवायु परिवर्तन का संकट सिर्फ कार्बन उत्सर्जन में कमी लाकर ही ठीक नहीं किया जा सकता। इसके लिये व्यक्तिगत स्तर पर कदम उठाने की आवश्यकता है। हमें सभी प्रकार की उम्मीदों के लिये सरकार पर ही निर्भर नहीं रहना चाहिए।

सन्दर्भ सूची :–

1. गुहा,रामचन्द्र,–उपभोग की लक्ष्मण रेखा,पैग्विन बुक्स लिमिटेड,लंदन,2013
2. राजगोपालन, आर., – पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2017
3. चातक, गोबिन्द, – पर्यावरण और संस्कृति का संकट, तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली, 2006
4. Ministry of Forestand Environment, Tiger census report, New Delhi 2018
5. WEF, - Environmental Performance Index, 2018.